गुरु रामदास जी
(1534–1581, गुरगद्दी 1574–1581)

गुरु रामदास जी का प्रारंभिक वष्तांत पिछले अध्यायों में दिया जा चुका है।

कई लेखकों का विचार है कि अकबर ने जमीन केवल गुरु रामदास जी को भेंट की थी, जिस पर इन्होंने रामदास नगर (बाद में जिसका नाम अमृतसर पड़ा) बसाया। सो, वे लेखक दलील देते हैं कि अमृतसर की नींव गुरु अमर दास जी के समय नहीं रखी गई थी। सिख इतिहास का आम जाना–पहचाना तथ्य है कि बादशाह अकबर गोइंदवाल आया था और उसने गुरु के लंगर में अन्य लोगों के साथ पंगत में बैठकर प्रसाद छका था। लगता है, बादशाह ने उस समय ही जमीन बीबी भानी के नाम कर दी थी और जेठा जी बीबी के पति थे, सो गुरु अमर दास जी ने भाई जेठा जी को इस जमीन की निगरानी सौंपी थी। गुरु नानक देव जी ने गुरगद्दी भाई लहणा जी को सौंपी, अपने सुपुत्रों को नहीं और यह प्रत्यक्ष है कि अपने सुपुत्रों की ईर्ष्या से बचने के लिए उन्होंने गुरु अंगद जी को खडूर में जाकर बसने के लिए कहा था। ऐसे हालात गुरु अंगद देव जी और गुरु अमर दास जी के समय भी घटित हो रहे थे। सो, यह बहुत संभव है कि नया नगर बसाने का विचार गुरु अमर दास जी के समय ही किया गया हो, जैसा कि पिछले अध्याय में बताया जा चुका है।

गुरु रामदास जी गोइंदवाल से अपने नये बसाये गये नगर में चले गये। बहुत सारे सिख गुरु जी के पीछे–पीछे आकर वहाँ बस गये। तब इसका नाम रामदासपुर था, जो अब अमृतसर है।

लाहौर जिले में पट्टी के एक पटवारी की पाँच बेटियाँ थीं। सबसे छोटी पाँचवी बेटी बड़े धार्मिक स्वभाव की थी। एक दिन, पिता ने पाँचों बेटियों से पूछा कि तुम्हें खाने–पीने को कौन देता है। बड़ी चारों बेटियों ने कहा कि आप हमारे माँ–बाप ही खाने–पीने और जीवन की अन्य ज़रूरी चीजें हमें देते हैं। पर सबसे छोटी पाँचवी बेटी ने कहा कि परमात्मा ही सबको रिजक देने वाला है। यह सुनकर पिता को बड़ा गुस्सा आया और वह कहने लगा, "मैं देखता हूँ कि रब तेरी कैसे रक्षा करता है।"

एक दिन, एक विकलांग कोढ़ी उस नगर में आया और पिता ने उस छोटी बेटी को सबक सिखाने के लिए उसका विवाह इस कोढ़ी से कर दिया। उस बेटी ने खुशी से उस कोढ़ी को अपना पति स्वीकार कर लिया। उसने पति को एक टोकरे में बिठाकर अपने सिर पर उठा लिया और घर–घर जाकर अपनी जीविका के लिए मांगने लग पड़ी। एक दिन, वह अपने पति को एक पोखर के किनारे एक पेड़ के नीचे छोड़कर स्वयं पास वाले नगर में भोजन मांगने चली गई। कोढ़ी ने देखा कि कुछ कौए पोखर में नहाकर जब पानी से बाहर निकले, तो वे सफेद हो गये थे। कोढ़ी ने सोचा कि इस पानी में अरोग कर देने की अजीब करामाती शक्ति है। सो, वह अपनी टोकरी में से रेंगता हुआ पानी में जा घुसा और रब के रंग देखो, उसका कोढ़ दूर हो गया, सिवाय एक उंगली के जो पानी से बाहर रह गई थी। जब उसकी पत्नी वापस लौटी, उसने स्वस्थ हो गये कोढ़ी के बताने पर विश्वास नहीं किया। आखिर, वे गुरु रामदास जी के पास गये और उन्होंने बीबी को भरोसा दिलाया कि इस पानी में, जैसा कि उसके पति ने बताया था, रोग दूर कर देने का अलौकिक गुण है। इस तरह वह जोड़ी गुरु जी की शिष्य बन गई और बाद में सरोवर की खुदाई की सेवा में इसने हिस्सा लिया।

जिस वृक्ष के नीचे उस स्त्री ने अपने कोढ़ी पति को छोड़ा था, वह अभी भी मौजूद है और "दुख भंजनी बेरी" के नाम से जाना जाता है। वह पोखर सरोवर का रूप बनकर अमृतसर – 'अमृत का सरोवर' कहलाया और वहाँ बनाये गये नगर को भी अमृतसर नाम दिया गया। सरोवर और नगर का काम गुरु रामदास जी के समय में पूरा नहीं हो सका था और पाँचवें गुरु अर्जन देव जी ने इसे पूरा किया था।

गुरु रामदास जी और श्रीचंद :

गुरु नानक देव जी के सबसे बड़े सुपुत्र बाबा श्रीचंद ने अपना ही सम्प्रदाय चलाया हुआ था, जिसे उदासी कहा जाता था। वह अमृतसर आने पर गुरु रामदास जी के दर्शन करने के लिए उपस्थित हुए। गुरु

जी की लम्बी दाढ़ी देखकर बाबा जी हँसी में पूछने लगे, "आपने इतनी लम्बी दाढ़ी किसलिए रखी हुई है ?" गुरु जी ने उत्तर दिया, "आप जैसे सन्तों के पवित्र चरणों पर से धूल साफ करने के लिए।" श्रीचंद जी ने इसके उत्तर में कहा, "यह आपकी मिठासभरी नम्रता का जादू ही है, जिसने आपको इतना महान बना दिया है और मुझे इतना छोटा महसूस करवाती है।"

बाबा श्रीचंद जी ने गुरु जी को सहयोग देने का प्रण किया। उसके बाद उदासियों ने सिख धर्म की सेवा करने में कोई कसर नहीं रहने दी। कहा जाता है कि बंदा बहादुर के देहान्त के बाद जब मुगल शासकों ने सिख धर्म को नष्ट कर देने का फैसला किया, तो ये उदासी ही थे, जिन्होंने सिख धर्म की दिव्य ज्योति को जलाये रखा था।

गुरु का लंगर :

पहले तीन गुरु साहिबानों की तरह गुरु रामदास जी ने लंगर का कार्य जारी रखा और इसे और अधिक विस्तृत ढंग से और विधिवत तरीके से किया। पहले की तरह लंगर में पंगत की प्रथा का कड़ाई से पालन किया गया। हर कोई बिना नस्ल, जात, मत, धर्म या लिंग के भेदभाव से, बिना किसी झिझक के लंगर में बैठकर भोजन छक सकता था। जात–पात और तीर्थ यात्रियों की निन्दा की गई और वहमों–भ्रमों को रोका गया।

नई प्रथाएँ :

गुरु रामदास जी ने "लावां" नामक बाणी का उच्चारण किया जो गुरु ग्रंथ साहिब जी में सूही महल्ला 4, पृष्ठ 773 पर अंकित है, और सिखों को विवाह इसी रीति के अनुसार निभाने के लिए उपदेश दिया गया। लावां के शबद में ही विवाहित जोड़ी के लिए शिक्षा दी गई है कि वे एक–दूसरे के लिए सच्चा प्रेम बढ़ायें। असल में, यह शबद मनुष्यों के लिए अकाल पुरुख रूपी लाड़े (दूल्हे) के वास्ते प्रेम बढ़ाना बताता है।

गुरु जी ने सिखों को अपने धर्म के अनुसार जीवन व्यतीत करने के लिए नीचे लिखे 'शबद' के द्वारा उपदेश दिया :

"गुर सतिगुर का जो सिखु अखाए सु भलके उठि हरिनामु धिआवै।
उदमु करे भलके परभाती इस्नानु करे अमृतसरि नावै।
उपदेसि गुरु हरि हरि जपु जापै सभि किलविख पाप दोख लहि जावै।
फिरि चड़ै दिवसु गुरबाणी गावै बहदिआ उठदिआ हरिनामु धिआवै।
जो सासि गिरासि धिआए मेरा हरि हरि सो गुरसिख गुरु मनि भावै।
जिसनो दयालु होवै मेरा सुआमी तिसु गुरसिख गुरु उपदेसु सुणावै।
जनु नानकु धूड़ि मंगै तिसु गुरसिख की जो आपि जपै अवरह नामु जपावै।"
(गउड़ी की वार, महल्ला 4, पृष्ठ 305–6)

गुरुगद्दी के लिए चुनाव :

गुरु जी के भाई लाहौर वाले सहारी मल्ल ने अपने पुत्र के विवाह पर गुरु जी को दर्शन देने के लिए निमंत्रण भेजा। किसी कारणवश गुरु जी तो नहीं जा सके, पर अपने बड़े सुपुत्र पृथी चंद को जाने के लिए कहा। पृथी चंद ने मना कर दिया। इस 'ना' के पीछे दो मंतव्य संभव तौर पर कहे जाते हैं। एक तो यह कि गुरु जी के लिए जो भेंटें आती थीं, वह उनकी निगरानी करता था, जिनमें से चोरी–छिपे कुछ धन वह अपने लिए एक तरफ रख लेता था। अगर वह लाहौर चला जाता तो यह गलत ढंग का लाभ किसी दूसरे के हाथों में जा सकता था। दूसरा, उसने सोचा कि वह समय जल्द आने वाला है, जब पिता जी के बाद गुरगद्दी पर बैठने के लिए किसी को चुना जाएगा। सो, उसे अमृतसर में ही रहना चाहिए। गुरु जी

का दूसरा सुपुत्र महादेव भी नहीं जाना चाहता था, क्योंकि वह दुनियादारी के कामों से विरक्त था। तीसरे सुपुत्र अर्जन देव विवाह में जाने के लिए मान गये। गुरु जी ने उसे आदेश दिया कि विवाह के बाद वह लाहौर में ही ठहरे, वहाँ की सिख–संगत की देखभाल करने के वास्ते।

कुछ समय बाद अर्जन देव जी को अपने पिता और गुरु जी से यह बिछोड़ा सह न सकने का दुख सताने लगा। उन्होंने गुरु जी को तीन पत्र लिखे, जिनमें से दो पत्र बड़े भाई पृथी चंद ने रख लिए। अन्तिम पत्र जिस पर 3 की संख्या अंकित थी, गुरु जी के पास पहुँची तो अर्जन देव जी को तुरन्त लाहौर से वापस बुला लिया गया। अर्जन देव जी ने लौटकर पिता जी को बताया कि उन्होंने तीन पत्र लिखकर भेजे थे। सच सामने आया तो पृथी चंद को मजबूरन पहले दो पत्र गुरु जी को देने पड़े और पृथी चंद की करतूतों का भांडा फूट गया।

गुरु रामदास जी ने अर्जन देव जी को गले लगाया और नारियल और पाँच पैसे मंगवाकर उनके सम्मुख रख दिए। गुरु जी स्वयं गद्दी से उतरकर, अर्जन देव जी को बैठी हुई सारी संगत के सामने गुरगद्दी पर बिठाया। बाबा बुड्ढ़ा जी ने गुरु अर्जन देव जी के मस्तक पर रूहानियत की पातशाही का तिलक लगाया और इस प्रकार, गुरु अर्जन देव जी गुरगद्दी पर स्थापित हुए। यह घटना अगस्त 1581 में घटित हुई।

इस पर पृथी चंद इतना पागल हो उठा कि उसने अपने पिता और गुरु जी को बुराभला कह डाला। साथ ही, उसने बाबा बुड्ढा जी से कहा कि उसके पिता द्वारा उसके छोटे भाई को गुरगद्दी देने का काम ठीक नहीं। उसने सौगन्ध खाई कि वह गुरु अर्जन देव जी को गद्दी से उतार देगा और स्वयं गद्दी पर बैठेगा। गुरु रामदास जी ने पृथी चंद को समझाया कि पुत्र, अपने पिता के साथ झगड़ा करना अच्छा काम नहीं है, पर वह न माना और उसने खुले मुँह विरोध करने का तरीका अपना लिया।

गुरु अर्जन देव जी को गुरगद्दी सौंपकर गुरु रामदास जी अपने मुख्य ठिकाने गोइंदवाल चले गये। कुछ दिन बाद पहली सितम्बर 1581 को गुरु रामदास जी परम ज्योति में समा गये।